व्यक्ति स्वयं अपना भाग्य विधाता है : आचार्यश्री महाप्रज्ञ

लाडनूं, 5 मई।

आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने जैन विश्व भारती प्रांगण के सुधर्मा सभा में धर्मसभा को संबोधित करते हुए कहा कि दो शब्द हमारे सामने है एक स्वार्थ और दूसरा परमार्थ। स्वार्थ अपने लिये होता है और परमार्थ अपने व्यक्तिगत प्रयोजन की सिद्धि के लिए नहीं किंतु अपनी उदाप्त चेतना की सिद्धि के लिए होता है। कोई भी आदमी स्वार्थ मुक्त नहीं हो सकता, क्योंकि स्वार्थ एक बड़ी प्रेरणा है, बड़ी शक्ति है और वह न हो तो कुछ काम कर नहीं सकता। किंतु जब स्वार्थ ही रहे और परमार्थ की चेतना जागृत न हो तो फिर स्वार्थ विशुद्ध नहीं रहता, निर्मल नहीं रहता, उसमें अशुद्धियां और मलीनताएं समावेश कर जाती है।

आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने कहा कि अगर करुणा की चेतना जागृत हो तो कोई आदमी गलत काम कर नहीं सकता। मन का नियमन करने वाला धैर्य है और करुणा है तो मनुष्य गलत काम से बच जाता है किंतु जिसमें धृति नहीं और करुणा भी नहीं तो फिर उसे रोकना कठिन होता है। जब आत्मा नहीं, पुनर्जन्म नहीं, कर्म नहीं तो फिर आदमी को कुछ भी करने में संकोच नहीं होता। उन्होंने कहा कि अगले जन्म में क्या होगा या मेरा कर्म है वह कर्म मुझे क्या फल देगा यह चिंतन व्यक्ति को बुरा काम करने से रोकता है।

आचार्य महाप्रज्ञ ने कहा कि चेतना के स्तर पर अनेक बदलाव आते हैं। हर व्यक्ति के लिए विमर्श का विषय है कि आदमी का परिणाम और लेश्या शुद्ध न रहे तो अधोगमन भी हो सकता है। जब तक वीतराग अवस्था प्राप्त नहीं होती तब तक ऊर्ध्वगमन और अधोगमन का चक्र चलता रहता है। जब–जब राग–द्वेष प्रबल होता है तो ऊपर उठा आदमी भी नीचे चला जाता है। और राग–द्वेष शांत होता है तो निम्न चेतना वाला भी ऊपर चला जाता है। व्यक्ति के सामने यह स्पष्ट है कि अगर व्यक्ति ऊर्ध्वगमन की स्थिति में रहना चाहें फिर नीचे न आएं तो फिर उसे समता की अच्छी साधना करनी होगी। जो व्यक्ति एक भूमिका तक समता की, समभाव की साधना कर लेता है वह फिर नीची गति में नहीं जाता। इसी बात को कर्मशास्त्रीय भाषा में कहा गया है कि सम्यक् दर्शन प्राप्त होने के बाद निम्न गति नहीं होती, उच्च गति होती है। सम्यक दर्शन का परिणाम है यह समभाव की साधना। जब दृष्टिकोण सम्यक नहीं है तो समभाव की साधना नहीं हो सकती। पहले सम्यक् दर्शन का विकास होता है उसके बाद सम्यक् चारित्र यानी समभाव या सामायिक का विकास होता है। जिस व्यक्ति में सम्यक् दर्शन है और समभाव है उसकी गति कभी निम्न नहीं होती है और वह ऊपर से नीचे नहीं गिरता। जब दृष्टिकोण मिथ्या बन जाता है और समभाव विषमभाव में बदलता है तो ऊपर वाला भी नीचे आ सकता है। इसलिए आवश्यक है कि व्यक्ति ऐसी साधना करें जिससे उसका सम्यक् दर्शन स्थायी सम्यक्त्व बन जाए और उसका समभाव एक उदाप्त चरित्र बन जाए। उन्होंने कहा कि कोई भी व्यक्ति यह न माने कि मेरा भाग्य बदलता नहीं है भाग्य को बदल सकते हैं, कर्म को बदल सकते हैं। भगवान महावीर ने जो कर्मवाद का सिद्धांत दिया है वह परिवर्तन का सिद्धांत है कि उसमें परिवर्तन किया जा सकता है। जो कर्म किया वैसे ही भुगतना पड़ेगा यह कदाचित नियम हो सकता है किंतु उसका विशेष नियम है कि व्यक्ति अपने कर्म को बदल सकते हैं और 'हम हैं अपने भाग्य के विधाता' यह बात समझ में आ जाए तो शायद आदमी अपने भाग्योदय के लिए या अपने कर्मों को बदलने के लिए अच्छे पुरुषार्थ में लगकर ऐसी भूमिका का निर्माण कर सकता है जिस भूमिका के लिए सबके मन में एक आकांक्षा बनी रहती है।

युवाचार्यश्री महाश्रमण ने कहा कि अर्थ, धर्म और काम ये तीन प्रत्यक्ष हैं। एक गृहस्थ के जीवन में अर्थ न हो काम न हो और धर्म न हो तो उसका जीवन पशु के जीवन की तरह होता है। गृहस्थ जीवन में तीनों की उपयोगिता मानी गई इन तीनों में धर्म अधिक महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि धर्म नहीं है तो अर्थ और काम का सम्यक् उपयोग नहीं हो सकता। धर्म के द्वारा ही व्यक्ति सही रास्ते पर चल सकता है और धन का सद्उपयोग कर सकता है।